॥ ओ३म् ॥

यज्ञविधि

(महर्षि दयानन्द द्वारा प्रणीत संस्कारविधि के
आधार पर सम्पादित)

सम्पादन

सतीश आर्य

निवेदन

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित पंचमहायज्ञों की विधियों में आज हर विद्वान् एवं प्रकाशक अपनी मनमर्जी से परिवर्तन करते हुए प्रकाशित कर रहा है इससे विभिन्न आर्य समाजों में होने वाले यज्ञ में एक रूपता नहीं रह गई है। इसी प्रकार विभिन्न विद्वान् भी अपनी सुविधानुकूल विधियों के अनुसार यज्ञों को कर और करवा रहे हैं, जिससे जन सामान्य में भ्रान्तियाँ फैल रही हैं। जन सामान्य इस प्रकार से विधि हीन यज्ञों को करता हुआ अपने कर्त्तव्यों की इतिश्री मान रहा है, तथा अपने आप को धार्मिक अनुष्ठानों का पालक मानता है। यज्ञों में एक रूपता लाने का केवल और केवल मात्र एक ही उपाय है कि जिन विधियों में महर्षि दयानन्द ने अपने अन्तिम कर्मकाण्ड विषयक ग्रन्थ "संस्कारविधि" में प्रतिपादित किया है, उन विधियों को उसी रूप में स्वीकार कर लिया जाये।

अतः यज्ञों में एकरूपता लाने के वृहद् उद्देश्य से संस्कार विधि के आधार पर पंचमहायज्ञों को इस लघु पुस्तिका में दिया जा रहा है। परमात्मा हम सभी को सद्बुद्धि प्रदान करे जिससे मानवमात्र राग-द्वेष एवं पक्षपात की भावना से रहित होकर सत्य को अपनाता हुआ, अपने कर्मों को धर्मानुकूल करता हुआ, शास्त्रानुकूल कर्मकाण्ड को अपना कर जीवन की सफलता को प्राप्त करे तथा सत्य को ही प्रचारित और प्रसारित करे। ओम् शम्।

सतीश आर्य

॥ ओ३म् ॥

यज्ञविधि

सदा स्त्री पुरुष १० दश बजे शयन और रात्रि के पिछले प्रहर वा ४ चार बजे उठ के प्रथम हृदय में परमेश्वर का चिन्तन करके धर्म और अर्थ का विचार किया करें और धर्म और अर्थ के अनुष्ठान वा उद्योग करने में यदि कभी पीडा भी हो तथापि धर्मयुक्त पुरुषार्थ को कभी न छोडें किन्तु सदा शरीर और आत्मा की रक्षा के लिये युक्त आहार विहार, औषधसेवन, सुपथ्य आदि से निरन्तर उद्योग करके व्यावहारिक और पारमार्थिक कर्त्तव्य कर्म की सिद्धि कृपालिये ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना भी किया करें कि जिस परमेश्वर की दृष्टि और सहाय से महाकठिन कार्य भी सुगमता से सिद्ध हो सकें इस के लिये निम्नलिखित मन्त्र हैं-

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातस्सोममुत रुद्रं हुवेम॥ १॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्त्ता।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह॥ २॥

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम॥ ३॥

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम॥ ४ ॥

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुर एता भवेह॥ ५॥

॥ ऋ० मं० ७। सू० ४१ । मं० १-५॥

इस प्रकार परमेश्वर की प्रार्थना उपासना करनी तत्पश्चात् शौच, दन्तधावन, मुखप्रक्षालन करके स्नान करें पश्चात् एक कोश वा डेढ कोश एकान्त जंगल में जा के योगाभ्यास की रीति से परमेश्वर की उपासना कर सूर्योदय पर्यन्त अथवा घडी आध घडी दिन चढे तक घर में आके सन्ध्योपासनादि नित्य कर्म नीचे लिखे प्रमाणे यथाविधि उचित समय में किया करें इन नित्य करने के योग्य कर्मों में लिखे हुए मन्त्रों का अर्थ और प्रमाण पञ्चमहायज्ञविधि में देख लेवें।

अथ सन्ध्योपासन विधि

प्रथम शरीरशुद्धि अर्थात् स्नान पर्यन्त कर्म करके **सन्ध्योपासन का आरम्भ करें** आरम्भ में दक्षिण हस्त में जल लेके —

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥ १ ॥
ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥ २ ॥
ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा॥ ३॥

इन तीन मन्त्रों से एक-एक से एक-एक आचमन कर दोनों हाथ धो, कान आँख नासिका आदि का शुद्ध जल से स्पर्श करके शुद्ध देश पवित्रासन पर जिधर की ओर का वायु हो उधर को मुख करके नाभि के नीचे से मूलेन्द्रिय को ऊपर सङ्कोच करके हृदय के वायु को बल से बाहर निकाल के यथाशक्ति रोके पश्चात् धीरे-धीरे भीतर लेके भीतर थोडा सा रोके यह एक प्राणायाम हुआ इसी प्रकार कम से कम तीन प्राणायाम करे नासिका को हाथ से न पकडे । इस समय परमेश्वर की स्तुति प्रार्थनोपासना हृदय में करके -

ओं शन्नों देवीरभिष्टय आपों भवन्तु पीतयें ।
शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥ यजु० ३६।१२ ॥

इस मन्त्र को एक बार पढ के तीन आचमन करे पश्चात् पात्र में से मध्यमा अनामिका अङ्गुलियों से जल स्पर्श करके प्रथम दक्षिण और पश्चात् वाम निम्नलिखित मन्त्रों से स्पर्श करे-

ओं वाक् वाक् ॥ इस मन्त्र से मुख का दक्षिण और वाम पार्श्व

ओं प्राणः प्राणः ॥ इससे दक्षिण और वाम नासिका के छिद्र

ओं चक्षुश्चक्षुः ॥ इससे दक्षिण और वाम नेत्र

ओं श्रोत्रं श्रोत्रम् ॥ इससे दक्षिण और वाम श्रोत्र

ओं नाभिः ॥ इससे नाभि

ओं हृदयम् ॥ इससे हृदय

ओं कण्ठः ॥ इससे कण्ठ

ओं शिरः ॥ इससे मस्तक

ओं बाहुभ्यां यशोबलम्॥ इससे दोनों भुजाओं के मूल स्कन्ध और

ओं करतलकरपृष्ठे ॥ इससे दोनों हाथों के ऊपर तले स्पर्श करके मार्जन करे ॥

ओं भूः पुनातु शिरसि ॥ इस मन्त्र से शिर पर

ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः॥ इस मन्त्र से दोनों नेत्रों पर

ओं स्वः पुनातु कण्ठे ॥ इस मन्त्र से कण्ठ पर

ओं महः पुनातु हृदये ॥ इस मन्त्र से हृदय पर

ओं जनः पुनातु नाभ्याम् ॥ इससे नाभि पर

ओं तपः पुनातु पादयोः ॥ इससे दोनों पगों पर

ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि॥ इससे पुनः मस्तक पर

ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र॥ इस मन्त्र से सब अङ्गों पर छींटा देवे॥

पुनः पूर्वोक्त रीति से प्राणायाम की क्रिया करता जावे। और नीचे लिखे मन्त्र का जप भी करता जाय ॥

ओं भूः, ओं भुवः, ओं स्वः, ओं महः, ओं जनः, ओं तपः, ओं सत्यम् ॥

इसी रीति से कम से कम तीन और अधिक से अधिक २१ इक्कीस प्राणायाम

करे तत्पश्चात् सृष्टिकर्त्ता परमात्मा और सृष्टिक्रम का विचार नीचे लिखित मन्त्रों से करे और जगदीश्वर को सर्वव्यापक न्यायकारी सर्वत्र सर्वदा सब जीवों के कर्मों के द्रष्टा को निश्चित मान के पाप की ओर अपने आत्मा और मन को कभी न जाने देवे किन्तु सदा धर्मयुक्त कर्मों में वर्त्तमान रक्खे ॥

ओम् ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः॥ १॥

समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत ।
अहोरात्राणि विदधद् विश्वस्य मिषतो वशी॥ २॥

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् ।
दिवं च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः ॥ ३॥

॥ ऋ० म० १०। सू० १९०। म० १-३ ॥

इन मन्त्रों को पढ के, पुनः

ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥ यजु० ३६ ।१२ ॥

इस मन्त्र से तीन आचमन करके निम्नलिखित मन्त्रों से सर्वव्यापक परमात्मा की स्तुति प्रार्थना करे ॥

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽस्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ १॥

दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽस्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो

जम्भे॑ दध्मः॥ २ ॥

प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ३॥

उदीची दिक्सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताऽशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ४॥

ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ५ ॥

ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान्द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ ६॥

अथर्व० कां० ३ । सू० २७ । म० १-६॥

इन मन्त्रों को पढ़ते जाना और अपने मन से चारों ओर बाहर भीतर परमात्मा को पूरण जानकर निर्भय निश्शङ्क उत्साही आनन्दित पुरुषार्थी रहना तत्पश्चात् परमात्मा का उपस्थान अर्थात् परमेश्वर के निकट मैं और मेरे अतिनिकट परमात्मा है ऐसी बुद्धि करके करे॥

जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः।
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः॥ १॥

ऋ० मं० १। सू० ९९। मं० १॥

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आ प्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्षꣳ सूर्यऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च॥ १॥

यजु० अ० १३। म० ४६॥

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः।
दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ २ ॥ यजु० अ० ३३। म० ३१ ॥

उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ॥ ३ ॥

यजु० अ० ३५। म० १४॥

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्र ब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ ४ ॥

यजु० अ० ३६। म० २४ ॥

इन मन्त्रों से परमात्मा का उपस्थान करके पुनः

ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥ यजु० ३६ ।१२ ॥

इससे तीन आचमन करके ,

ओं भूर्भुवः स्वः ।तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ यजु० ३६ ।३॥

अर्थ :- (ओ३म्) यह मुख्य परमेश्वर का नाम है जिस नाम के साथ अन्य सब नाम लग जाते हैं (भूः) जो प्राण का भी प्राण (भुवः) सब दुखों से छुडानेहारा (स्वः) स्वयं सुखस्वरूप और अपने उपासकों को सब सुख की प्राप्ति करानेहारा है उस (सवितुः) सब जगत् की उत्पति करने वाले सूर्यादि प्रकाशकों के भी प्रकाशक समग्र ऐश्वर्य के दाता (देवस्य) कामना करने योग्य सर्वत्र विजय करानेहारे परमात्मा का जो (वरेण्यम्) अतिश्रेष्ठ ग्रहण और ध्यान करने योग्य (भर्गः) सब क्लेशों को भस्म

करनेहारा पवित्र शुद्धस्वरूप है (तत्) उसको हम लोग (धीमहि) धारण करें (यः) यह जो परमात्मा (नः) हमारी (धियः) बुद्धियों को उत्तम गुण कर्म स्वभावों में (प्रचोदयात्) प्रेरणा करे इसी प्रयोजन के लिए इस जगदीश्वर की स्तुति प्रार्थनोपासना करनी और इससे भिन्न किसी को उपास्य इष्टदेव उसके तुल्य वा उससे अधिक नहीं मानना चाहिये इस प्रकार गायत्री मन्त्र का अर्थ विचारपूर्वक परमात्मा की स्तुति प्रार्थनोपासना करे पुनः **हे परमेश्वर दयानिधे ! आपकी कृपा से जपोपासनादि कर्मों को करके हम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि को शीघ्र प्राप्त होवें** पुनः

ओं नमः शम्भवार्य च मयोभवार्य च नमः शङ्करार्य च मयस्करार्य च नमः शिवार्य च शिवतराय च॥ ५ ॥

यजु० अ० १६। म० ४१॥

इससे परमात्मा को नमस्कार करके (शन्नो०) इस मन्त्र से तीन आचमन करके अग्निहोत्र का आरम्भ करें॥

॥ इति संक्षेपतः सन्ध्योपासनविधिः समाप्तः ॥ १॥

अथ अग्निहोत्रम्

जैसे सायं प्रातः दोनों संधिवेलाओं में सन्ध्योपासन करें इसी प्रकार दोनों स्त्री पुरुष किसी विशेष कारण से स्त्री वा पुरुष अग्निहोत्र के समय दोनों साथ उपस्थित न हो सके तो एक ही स्त्री वा पुरुष दोनों की ओर का कृत्य कर लेवे अर्थात् एक-एक मन्त्र को दो दो बार पढके दो दो आहुति करे॥ अग्निहोत्र भी दोनों समय में किया करें

ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥ यजु० ३६ ।१२ ॥

इस मन्त्र से तीन आचमन करके अग्निहोत्र का आरम्भ करें ॥

प्रथम यज्ञकुण्ड में शुद्ध देशोत्पन्न आम, बड, पीपल, गूलर व पलाश आदि

की घुन अथवा कीडे रहित समिधाचयन वेदी में करें पुनः ॥

ओं भूर्भुवः स्वः ॥

इस मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मण क्षत्रिय वा वैश्य के घर से अग्नि ला अथवा घृत का दीपक जला उस से कपूर में लगा किसी एक पात्र में धर उस में छोटी-छोटी लकडी लगा के यजमान वा पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों से उठा यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड कर अगले मन्त्र से अग्न्याधान करें वह मन्त्र यह है ॥

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा । तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥१॥

॥यजु० अ० ३। म० ५ ॥

इस मन्त्र से वेदी के बीच में अग्नि को धर उस पर छोटे-छोटे काष्ठ और थोडा कपूर धर अगला मन्त्र पढ के व्यञ्जन से अग्नि को प्रदीप्त करें॥

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥ २॥ यजु० अ० १५। म० ५४ ॥

जब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे तब चन्दन की अथवा ऊपर लिखित पलाशादि की तीन लकडी आठ-आठ अंगुल की घृत में डुबा उन में से एक-एक निकाल नीचे लिखे एक-एक मन्त्र से एक-एक समिधा को अग्नि में चढावें वे मन्त्र ये हैं ॥

ओम् अयं त इध्मऽआत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय, स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे - इदन्न मम॥ १॥

इस मन्त्र से एक

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन, स्वाहा॥ इदमग्नये - इदन्न मम॥ २॥

इस से और

सु॒समि॑द्धाय शो॒चिषे॑ घृ॒तं ती॒व्रं जु॑होतन। अ॒ग्नये॑ जा॒तवे॑दसे, स्वाहा॑॥ इदमग्नये जातवेदसे - इदन्न मम॥ ३॥

इस मन्त्र से अर्थात् इन दोनों मन्त्रों से दूसरी

तन्त्वा॑ स॒मिद्भि॑रङ्गिरो घृ॒तेन॑ वर्द्धयामसि ।बृ॒हच्छो॑चा यविष्ठ्य स्वाहा॑॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे - इदन्न मम ॥ ४॥

यजु० अ० ३। म०१-३॥

इस मन्त्र से तीसरी समिधा की आहुति देवे ।

तत्पश्चात् वेदी के पूर्व दिशा आदि और अञ्जलि में जल लेके चारों ओर छिडकावें उसके ये मन्त्र हैं -

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व ॥ इस मन्त्र से पूर्व

ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥ इससे पश्चिम

ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥ इससे उत्तर और

ओं देव॑ सवितः॒ प्रसु॑व य॒ज्ञं प्रसु॑व य॒ज्ञप॑तिं॒ भगा॑य । दि॒व्यो ग॑न्ध॒र्वः के॑त॒पूः केत॑ं नः पुनातु वा॒चस्पति॒र्वाच॑ं नः स्वदतु॥

॥यजु ० ३०।१ ॥

इस मन्त्र से वेदी के चारों ओर जलप्रोक्षण करके शुद्ध किये हुए सुगन्ध्यादि युक्त घी को तपा के पात्र में से लेके कुण्ड से पश्चिम भाग में पूर्वाभिमुख बैठ के घृतपात्र में से स्रुवा को भर अंगूठा मध्यमा अनामिका से स्रुवा को पकड के

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदन्न मम ॥

इस मन्त्र से वेदी के उत्तर भाग अग्नि में

ओं सोमाय स्वाहा ॥ इदं सोमाय - इदन्न मम ॥

इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण भाग में प्रज्वलित समिधा पर आहुति देनी तत्पश्चात् -

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये - इदन्न मम ॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय - इदन्न मम ॥

इन दोनों मन्त्रों से वेदी के मध्य में दो आहुति देनी उस के पश्चात् चार आहुति अर्थात् आघारावाज्यभागाहुति देके नीचे लिखे हुए मन्त्रों से प्रातःकाल अग्निहोत्र करे -

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥ १ ॥

ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥ ३ ॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥४॥

अब नीचे लिखे हुए मन्त्र सायंकाल में अग्निहोत्र के जानो ।

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ १ ॥

ओम् अग्निवर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ ३ ॥

इस मन्त्र को मन से उच्चारण करके तीसरी आहुति देनी ।

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥ ४ ॥

अब निम्नलिखित मन्त्रों से प्रातः सायं आहुति देनी चाहिए ॥

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा ॥
इदमग्नये प्राणाय, इदन्न मम ॥ १ ॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा ॥
इदं वायवेऽपानाय, इदन्न मम ॥ २ ॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा ॥

इदमादित्याय, व्यानाय, इदन्न मम ॥ ३ ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा॥
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः, प्राणापानव्यानेभ्यः, इदन्न मम॥ ४॥

ओम् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥ ५॥

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।

तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ ६ ॥

यजु० अ० ३२। म० १४॥

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।

यद्भद्रं तन्न आसुव स्वाहा ॥ ७ ॥ यजु० अ० ३०। म० ३॥

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ॥ ८ ॥ यजु० अ० ४०। म० १६॥

इन ८ आठ मन्त्रों से एक-एक मन्त्र करके एक-एक आहुति, ऐसे ८ आठ देके :—

ओं सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा ॥

इस मन्त्र से तीन पूर्णाहुति अर्थात् एक-एक बार पढके एक-एक करके तीन आहुति देवे।

॥ इत्यग्निहोत्रविधिः संक्षेपतः समाप्तः॥ २ ॥

॥ अथ पितृयज्ञः ॥

अग्निहोत्रविधि पूर्ण करके तीसरा पितृयज्ञ करे अर्थात् जीते हुए माता पिता आदि की यथावत् सेवा करनी ' पितृयज्ञ ' कहाता है ॥ ३॥

॥ अथ बलिवैश्वदेवविधिः ॥

ओम् अग्नये स्वाहा॥ १॥ ओं सोमाय स्वाहा॥ २॥ ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा॥ ३॥ ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा ॥ ४॥ ओं धन्वन्तरये स्वाहा ॥ ५॥ ओं कुह्वै स्वाहा॥ ६॥ ओमनुमत्यै स्वाहा॥ ७॥ ओं प्रजापतये स्वाहा॥ ८॥ ओं द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा॥ ९॥ ओं स्विष्टकृते स्वाहा॥ १०॥

इन दश मन्त्रों से घृतमिश्रित भात की, यदि भात न बना हो तो क्षार और लवणान्न को छोड के जो कुछ पाक में बना हो उसी की दश आहुति करे तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों से बलिदान करे -

ओं सानुगायेन्द्राय नमः॥ इससे पूर्व ॥
ओं सानुगाय यमाय नमः॥ इससे दक्षिण ॥
ओं सानुगाय वरुणाय नमः॥ इससे पश्चिम ॥
ओं सानुगाय सोमाय नमः॥ इससे उत्तर ॥
ओं मरुद्भ्यो नमः॥ इससे द्वार ॥
ओम् अद्भ्यो नमः॥ इससे जल ॥
ओं वनस्पतिभ्यो नमः॥ इससे मूसल और ऊखल ॥
ओं श्रियै नमः॥ इससे ईशान ॥
ओं भद्रकाल्यै नमः॥ इससे नैर्ऋत्य ॥
ओं ब्रह्मपतये नमः॥
ओं वास्तुपतये नमः॥ इनसे मध्य ॥

ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः॥
ओं नक्तंचारिभ्यो भूतेभ्यो नमः॥ इनसे ऊपर॥
ओं सर्वात्मभूतये नमः॥ इससे पृष्ठ ॥
ओं पितृभ्यः स्वधा नमः॥ इससे दक्षिण॥

इन मन्त्रों से एक पत्तल या थाली में यथोक्त दिशाओं में भाग धरना यदि भाग धरने के समय कोई अतिथि आजाय तो उसी को दे देना नहीं तो अग्नि में धर देना तत्पश्चात् घृत सहित लवणान्न ले के-

शुनां च पतितानां च श्वपचां पापरोगिणाम्।
वायसानां कृमीणां च शनकैर्निर्वपेद् भुवि॥

अर्थ :- कुत्ता, पतित, चंडाल, पापरोगी, काक और कृमी इन छः नामों से छः भाग पृथिवी में धरे और वे छः भाग जिस-जिस के नाम हैं उस-उस को देना चाहिए॥ ४ ॥

॥ अथातिथियज्ञः॥

पांचवां - जो धार्मिक परोपकारी सत्योपदेशक पक्षपात रहित शान्त सर्वहिकारक विद्वानों की अन्नादि से सेवा उन से प्रश्नोत्तर आदि करके विद्या प्राप्त होना अतिथि यज्ञ कहाता है उस को नित्य किया करें इस प्रकार पंच महायज्ञों को स्त्री पुरुष प्रतिदिन करते रहें॥ ५॥

इसके पश्चात् पक्षयज्ञ अर्थात् पौर्णमासी और अमावस्या के दिन नैत्यक अग्निहोत्र की आहुति दिये पश्चात् स्थालीपाक (भात, खिचडी, खीर, लड्डू, मोहनभोग आदि सब उत्तम पदार्थों को) बनाके निम्नलिखित मन्त्रों से विशेष आहुति करें ॥

पौर्णमासी की आहुतियाँ -

ओम् अग्नये स्वाहा ॥
ओम् अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा ॥
ओं विष्णवे स्वाहा ॥

इन तीन मन्त्रों से स्थालीपाक की तीन आहुति देनी तत्पश्चात् निम्न चार व्याहृति आज्याहुति देनी -

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदन्न मम ॥ १ ॥
ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे - इदन्न मम ॥ २॥
ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय - इदन्न मम॥ ३॥
ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा॥
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः - इदन्न मम ॥ ४ ॥

अमावस्या की आहुतियाँ -

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ १ ॥
ओम् इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा ॥ २ ॥
ओं विष्णवे स्वाहा ॥ ३ ॥

इन तीन मन्त्रों से स्थालीपाक की तीन आहुति देनी तत्पश्चात् निम्न ४ चार व्याहृति आज्याहुति देनी -

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदन्न मम ॥ १ ॥
ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे - इदन्न मम ॥ २॥
ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय - इदन्न मम॥ ३॥
ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः - इदन्न मम ॥ ४ ॥

इस प्रकार पक्षयाग, अर्थात् जिस के घर में अभाग्य से अग्निहोत्र न होता हो तो सर्वत्र पक्षयागादि में अग्न्याधान, समिदाधान, आघारावाज्याहुति, जलसिंचन करके ईश्वरोपासना, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण भी यथायोग्य करें।

— ००० —

- नवशस्येष्टि और संवत्सरेष्टि -

जब जब नवान्न आवे तब तब नवशस्येष्टि और संवत्सर के आरम्भ में निम्नलिखित विधि करें, अर्थात् जब-जब नवीन अन्न आवे तब-तब शस्येष्टि करके नवीन अन्न के भोजन को आरम्भ करें -

नवशस्येष्टि और संवत्सरेष्टि करना हो तो जिस दिन प्रसन्नता हो वही शुभ दिन जाने ग्राम और शहर के बाहर किसी शुद्ध खेत में यज्ञमण्डप बनाकर ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना, स्वस्तिवाचन, शान्तिकरण, ऋत्विग्वरण, आचमन, अङ्गस्पर्श, अग्न्याधान, समिदाधान, पञ्चघृताहुति, जलप्रोक्षण, ४ आघारावाज्याभागाहुतियाँ, ४ व्याहृति आहुतियाँ तथा अष्टाज्याहुतियाँ ये सोलह आहुतियाँ करके, कार्यकर्त्ता -

ओं पृथिवी द्यौः प्रदिशो दिशो यस्मै द्युभिरावृताः ।
तमिहेन्द्रमुपह्वये शिवा नः सन्तु हेतयः स्वाहा ॥ १ ॥

ओं यन्मे किञ्चिदुपेप्सितमस्मिन् कर्मणि वृत्रहन् ।
तन्मे सर्वꣳसमृध्यतां जीवतः शरदः शतꣳ स्वाहा ॥ २ ॥

ओं सम्पत्तिर्भूतिर्भूमिर्वृष्टिर्ज्यैष्ठ्यꣳ श्रैष्ठ्यꣳ श्रीः प्रजामिहावतु स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय - इदन्न मम ॥ ३ ॥

ओं यस्याभावे वैदिकलौकिकानां भूतिर्भवति कर्मणाम् । इन्द्रपत्नीमुपह्वये सीताꣳ सा मे त्वनपायिनी भूयात्कर्मणि कर्मणि स्वाहा॥ इदमिन्द्रपत्न्यै - इदन्न मम ॥ ४॥

ओम् अश्वावती गोमती सूनृतावती बिभर्ति या प्राणभृतो अतन्द्रिता। खलमालिनीमुर्वरामस्मिन् कर्मण्युपह्वये ध्रुवाꣳ सा मे त्वनपायिनी भूयात् स्वाहा ॥ इदं सीतायै - इदन्न मम॥५॥

इन मन्त्रों से प्रधान होम की पाँच आज्याहुति करके -

ओं सीतायै स्वाहा ॥
ओं प्रजायै स्वाहा ॥

ओं शमायै स्वाहा ॥
ओं भूत्यै स्वाहा ॥

इन चार मन्त्रों से चार, और यदस्य कर्मणो० मन्त्र से स्विष्टकृत होमाहुति एक से पाँच स्थालीपाक की आहुतियाँ देके पश्चात् सामान्यप्रकरण में लिखे अष्टाज्याहुति व्याहृति आहुति ४ चार ऐसे १२ बारह आज्याहुति देके वामदेव्यगान, ईश्वरोपासना स्वस्तिवाचन और शान्तिकरण करके यज्ञ की समाप्ति करें॥

सब संस्कारों की आदि में निम्नलिखित मन्त्रों का पाठ और अर्थ द्वारा एक विद्वान् वा बुद्धिमान पुरुष ईश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना स्थिर चित्त होकर परमात्मा में ध्यान लगा के करे और सब लोग उस में ध्यान लगा सुनें और विचारें।

॥ अथेश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनाः॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव ।
यद् भ॒द्रन्तन्न॒ आ सु॑व ॥ १ ॥ यजु० अ० ३०/ म० ३ ॥

अर्थः – हे (सवितः) सकल जगत् के उत्पत्ति कर्त्ता समग्र ऐश्वर्ययुक्त (देव) शुद्धस्वरूप सब सुखों के दाता परमेश्वर आप कृपा करके (नः) हमारे (विश्वानि) सम्पूर्ण (दुरितानि) दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को (परा, सुव) दूर कर दीजिये (यत्) जो (भद्रम्) कल्याणकारक गुण कर्म स्वभाव और पदार्थ हैं (तत्) वह सब हम को (आ, सुव) प्राप्त कीजिये ॥ १ ॥

हि॒र॒ण्य॒ग॒र्भः सम॑वर्त्तता॒ग्रे॑ भू॒तस्य॑ जा॒तः पति॒रेक॑ आसीत् ।
स दा॑धार पृथि॒वीं द्यामु॒तेमां कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम॥ २॥
यजु० अ० १३/ म० ४ ॥

अर्थः – जो (हिरण्यगर्भः) स्वप्रकाश स्वरूप और जिसने प्रकाश करने हारे सूर्य चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं जो (भूतस्य) उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का (जातः) प्रसिद्ध (पतिः) स्वामी (एकः) एक ही चेतन स्वरूप (आसीत्) था जो (अग्रे) सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व (समवर्त्तत) वर्त्तमान था (सः) सो (इमाम्) इस (पृथिवीम्) भूमि (उत) और (द्याम्) सूर्यादि को (दाधार) धारण कर रहा है हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) शुद्ध परमात्मा के लिये (हविषा) ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अतिप्रेम से (विधेम) विशेष भक्ति किया करें॥ २॥

य आ॑त्म॒दा ब॑ल॒दा यस्य॒ विश्व॑ उ॒पास॑ते प्र॒शिषं॒ यस्य॑ दे॒वाः।
यस्य॑च्छा॒याऽमृतं॒ यस्य॑ मृ॒त्युः कस्मै॑ दे॒वाय॑ ह॒विषा॑ विधेम॥ ३॥
यजु० अ० २५/ म०१३ ॥

अर्थः- (यः) जो (आत्मदाः) आत्मज्ञान का दाता (बलदाः) शरीर आत्मा और समाज के बल का देने हारा (यस्य) जिस की (विश्वे) सब (देवाः) विद्वान् लोग (उपासते) उपासना करते हैं और (यस्य) जिस का (प्रशिषम्) प्रत्यक्ष सत्य स्वरूप शासन और न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं (यस्य) जिस का (छाया) आश्रय ही

(अमृतम्) मोक्ष सुखदायक है (यस्य) जिस का न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही (मृत्युः) मृत्यु आदि दुःख का हेतु है हम लोग उस (कस्मै) सुख स्वरूप (देवाय) सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिये (हविषा) आत्मा और अन्तःकरण से (विधेम) भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें ॥ ३ ॥

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशेऽअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥४॥

यजु० अ० २३/ म० ३ ॥

अर्थः- (यः) जो (प्राणतः) प्राण वाले और (निमिषतः) अप्राणिरूप (जगतः) जगत् का (महित्वा) अपने अनन्त महिमा से (एक, इत्) एक ही (राजा) विराजमान राजा (बभूव) है (यः) जो (अस्य) इस (द्विपदः) मनुष्यादि और (चतुष्पदः) गौ आदि प्राणियों के शरीर की (ईशे) रचना करता है हम लोग उस (कस्मै) सुख स्वरूप (देवाय) सकलैश्वर्य के देने हारे परमात्मा के लिये (हविषा) अपनी सकल उत्तम सामग्री से (विधेम) विशेष भक्ति करें ॥ ४ ॥

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥५॥

यजु० अ० ३२/ म० ६॥

अर्थः- (येन) जिस परमात्मा ने (उग्रा) तीक्ष्ण स्वभाववाले (द्यौः) सूर्य आदि (च) और (पृथिवी) भूमि का (दृढा) धारण (येन) जिस जगदीश्वर ने (स्वः) सुख को (स्तभितम्) धारण और (येन) जिस ईश्वर ने (नाकः) दुःखरहित मोक्ष को धारण किया है (यः) जो (अन्तरिक्षे) आकाश में (रजसः) सब लोक-लोकान्तरों को (विमानः) विशेष मानयुक्त अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उडते हैं वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है हम लोग उस (कस्मै) सुखदायक (देवाय) कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिये (हविषा) सब सामर्थ्य से (विधेम) विशेष भक्ति करें॥ ५॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥६॥

ऋ० म० १०/सू० १२१/म०१० ॥

अर्थः- हे (प्रजापते) सब प्रजा के स्वामी परमात्मा (त्वत्) आप से (अन्यः)

भिन्न दूसरा कोई (ता) उन (एतानि) इन (विश्वा) सब (जातानि) उत्पन्न हुए जड चेतनादिकों को (न) नहीं (परि, बभूव) तिरस्कार करता है अर्थात् आप सर्वोपरि हैं (यत्कामाः) जिस-जिस पदार्थ की कामना वाले हम लोग (ते) आप का (जुहुमः) आश्रय लेवें और वाच्छा करें (तत्) उस-उस की कामना (नः) हमारी सिद्ध (अस्तु) होवे जिस से (वयम्) हम लोग (रयीणाम्) धनैश्वर्यों के (पतयः) स्वामी (स्याम) होवें ॥ ६ ॥

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त॥ ७ ॥

यजु० अ० ३२/ म० १०॥

अर्थः- हे मनुष्यों (सः) वह परमात्मा (नः) अपने लोगों का (बन्धुः) भ्राता के समान सुखदायक (जनिता) सकल जगत् का उत्पादक (सः) वह (विधाता) सब कामों को पूर्ण करने हारा (विश्वा) सम्पूर्ण (भुवनानि) लोकमात्र और (धामानि) नाम स्थान जन्मों को (वेद) जानता है और (यत्र) जिस (तृतीये) सांसारिक सुख-दुःख से रहित नित्यानन्दयुक्त (धामन्) मोक्ष स्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में (अमृतम्) मोक्ष को (आनशानाः) प्राप्त होके (देवाः) विद्वान् लोग (अध्यैरयन्त) स्वेच्छा पूर्वक विचरते हैं वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है अपने लोग मिल के सदा उस की भक्ति किया करें ॥ ७ ॥

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम॥ ८ ॥

यजु० अ० ४०/ म० १६॥

अर्थः- हे (अग्ने) स्वप्रकाश ज्ञानस्वरूप सब जगत् के प्रकाश करने हारे (देव) सकल सुखदाता परमेश्वर आप जिससे (विद्वान्) सम्पूर्ण विद्यायुक्त हैं कृपा करके (अस्मान्) हम लोगों को (राये) विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये (सुपथा) अच्छे धर्मयुक्त आप्त लोगों के मार्ग से (विश्वानि) सम्पूर्ण (वयुनानि) प्रज्ञान और उत्तम कर्म (नय) प्राप्त कराइये और (अस्मत्) हम से (जुहुराणम्) कुटिलतायुक्त (एनः) पापरूप कर्म को (युयोधि) दूर कीजिये इस कारण हम लोग (ते) आपकी (भूयिष्ठाम्) बहुत प्रकार की स्तुतिरूप (नम उक्तिम्) नम्रतापूर्वक प्रशंसा (विधेम) सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ॥ ८ ॥

॥ इतीश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासनाप्रकरणम् ॥

॥ अथ स्वस्तिवाचनम् ॥

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥

स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये ॥ २ ॥ ऋ० मं० १ । सू० १ । मं० १,६ ॥

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥ ३॥

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥४॥

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥ ५ ॥

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥ ६॥

स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताघ्नता जानता संगमेमहि ॥ ७ ॥

ऋ० मं० ५ । सू० ५१ । ११-१५ ॥

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।

ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥८॥

॥ ऋ० मं० ७ । सू० ३५ । १५॥

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः।
उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनु मदा स्वस्तये॥९॥
नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः।
ज्योतिरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥१०॥
सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्।
ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये ॥११॥

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥१२॥
येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये॥१३॥
य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥ १४ ॥
भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेंऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये॥१५॥
सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये॥१६॥

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहुतः।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये॥ १७ ॥
अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरुणः शर्म यच्छता स्वस्तये॥१८॥
अरिष्टः स मर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥१९॥
यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ॥ २०॥
स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्ववर्ति।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन॥२१॥
स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा॥ २२॥

ऋ० मं० १० । सू० ६३ । ३-१६ ॥

इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा वस्तेन ईशत माघशंसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥ २३॥ यजु० अ० १/ म० १ ॥

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासोऽअपरीतास उद्भिदः।

देवा नो यथा सदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे॥ २४॥
देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳरातिरभि नो निवर्त्तताम्।
देवानाꣳसख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥ २५॥
तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ २६॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ २७॥
भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ २८॥

यजु० अ० २५ । मं० १४, १५, १८, १६, २१ ॥

अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये ।
नि होता सत्सि बर्हिषि ॥ २९ ॥
त्वमग्ने यज्ञानाꣳ होता विश्वेषाꣳ हितः।
देवेभिर्मानुषे जने ॥ ३० ॥ सा० छन्द आ० प्रपा० १ । मं० १,२ ॥

ये त्रिषप्ताः परि यन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः ।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥ ३१ ॥

अथर्व० कां० १। सू० १। वर्ग १। अनु० १। प्रपा० १। मं० १॥

॥ इति स्वस्तिवाचनम् ॥

अथ शान्तिकरणम्

शन्नं इन्द्राग्नी भंवतामवोंभिः शन्न इन्द्रावरुंणा रातहंव्या।
शमिन्द्रासोमां सुविताय शं योः शन्न इन्द्रांपूषणा वाजंसातौ॥ १॥

शन्नो भगः शमु नः शंसों अस्तु शन्नः पुरंन्धिः शमु सन्तु रायंः।
शन्नंः सत्यस्यं सुयमंस्य शंसः शन्नों अर्य्यमा पुंरुजातो अंस्तु॥ २॥
शन्नों धाता शमु धर्त्ता नों अस्तु शन्नं उरूची भंवतु स्वधाभिंः।
शं रोदंसी बृहती शन्नो अद्रिः शन्नों देवानां सुहवांनि सन्तु॥ ३॥
शन्नों अग्निर्ज्योतिंरनीको अस्तु शन्नों मित्रावरुंणावश्विना शम्।
शन्नंः सुकृतां सृकृतानिं सन्तु शन्नं इषिरो अभिवांतु वातंः॥ ४॥
शन्नो द्यावांपृथिवी पूर्वहूंतौ शमन्तरिंक्षं दृशयें नो अस्तु।
शन्न ओषंधीर्वनिनों भवन्तु शन्नो रजंसस्पतिंरस्तु जिष्णुः॥ ५॥
शन्न इन्द्रो वसुंभिर्देवो अंस्तु शमांदित्येभिर्वरुंणः सुशंसंः।
शन्नों रुद्रो रुद्रेभिर्जलांषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिंरिह शृंणोतु॥ ६॥
शन्नः सोमों भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावांणः शमु सन्तु यज्ञाः।
शन्नः स्वरूंणां मितयों भवन्तु शन्नंः प्रस्व१ः शम्वंस्तु वेदिंः॥ ७॥

शन्नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शन्नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु ।
शन्नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शन्नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥ ८॥
शन्नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शन्नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः।
शन्नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शन्नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः॥ ९॥

शन्नो देवः सविता त्रायमाणः शन्नो भवन्तूषसो विभातीः।
शन्नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शन्नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः॥ १०॥
शन्नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शन्नो दिव्याः पार्थिवाः शन्नो अप्याः॥११॥
शन्नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शन्नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः।
शन्न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शन्नो भवन्तु पितरो हवेषु॥ १२॥
शन्नो अज एकपाद् देवो अस्तु शन्नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः।
शन्नो अपां नपात्पेरुरस्तु शन्नः पृश्निर्भवतु देवगोपाः॥ १३ ॥

ऋ० मं० ७ । सू० ३५ । मं० १-१३ ॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति ।
शन्नोऽअस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ १४ ॥

शन्नो वातः पवताꣳ शन्नस्तपतु सूर्य्यः ।

शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभि वर्षतु ॥ १५ ॥

अहानि शं भवन्तु नः शꣳ रात्रीः प्रति धीयताम् ।

शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्न इन्द्रावरुणा रातहव्या ।

शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः॥ १६॥

शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये ।

शंय्योरभि स्रवन्तु नः ॥ १७ ॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ १८ ॥

तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ १९॥

यजु० अ० ३६ । मं० ८, १०-१२, १७, २४ ॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।

दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ १॥

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।

यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ २॥

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्नऽऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ३॥

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ४॥

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ५॥

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥६॥

यजु० अ० ३४ । मं० १-६ ॥

स नः पवस्व शङ् गवे शं जनाय शमर्वते ।
शꣳराजन्नोषधीभ्यः ॥ २६ ॥ सामं उत्तरार्चिके प्रपा० १ । मं० ३ ॥

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे ।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु॥ २७॥

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात् ।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु॥२८॥

अथर्व० कां० १६ । सू० १५ । मं० ५,६ ॥

॥ इति शान्तिकरणम् ॥

अथ सामान्यप्रकरणम्

॥ अथ ऋत्विग्वरणम् ॥

यजमानोक्तिः - **ओमावसोः सदने सीदः ।**

इस मन्त्र का उच्चारण करके ऋत्विज् को कर्म कराने की इच्छा से स्वीकार करने के लिये प्रार्थना करें

ऋत्विगुक्तिः - **ओं सीदामि ।**

ऐसा कह के जो उस के लिये आसन बिछाया हो उस पर बैठे

यजमानोक्तिः - **अहमद्योक्तकर्मकरणाय भवन्तं वृणे ।**

ऋत्विगुक्तिः - **वृतोऽस्मि ॥**

ऋत्विजों का लक्षण :- अच्छे विद्वान् धार्मिक जितेन्द्रिय कर्म करने में कुशल निर्लोभ परोपकारी दुर्व्यसनों से रहित कुलीन सुशील वैदिक मत वाले वेदवित् एक दो तीन अथवा चार का वरण करें। जो एक हो तो उस का पुरोहित और जो दो हों तो ऋत्विक् पुरोहित और ३ तीन हों तो ऋत्विक् पुरोहित और अध्यक्ष और जो चार हों तो होता, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा, इन का आसन वेदी के चारों ओर अर्थात् होता का वेदी से पश्चिम आसन पूर्व मुख, अध्वर्यु का उत्तर आसन दक्षिण मुख, उद्गाता का पूर्व आसन पश्चिम मुख और ब्रह्मा का दक्षिण आसन उत्तर में मुख होना चाहिये और यजमान का आसन पश्चिम में और वह पूर्वाभिमुख अथवा दक्षिण में आसन पर बैठ के उत्तराभिमुख रहे और इन ऋत्विजों को सत्कारपूर्वक आसन पर बैठाना, और वे प्रसन्नता पूर्वक आसन पर बैठें और उपस्थित कर्म के विना दूसरा कर्म वा दूसरी बात कोई भी न करें और -

अपने अपने जल पात्र से सब जने जो कि यज्ञ करने को बैठे हों वे इन मन्त्रों से तीन तीन आचमन करें अर्थात् एक-एक से एक-एक बार आचमन करें वे मन्त्र ये हैं ॥

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥ १ ॥ इससे एक

ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥ २ ॥ इससे दूसरा

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥ ३॥

इस से तीसरा आचमन करके तत्पश्चात् नीचे लिखे मन्त्रों से जल करके अङ्गों का स्पर्श करे

ओं वाङ्मऽआस्येऽस्तु ॥ इस मन्त्र से मुख

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु॥ इस मन्त्र से नासिका के दोनों छिद्र

ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥ इस मन्त्र से दोनों आखें

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥ इस मन्त्र से दोनों कान

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ॥ इस मन्त्र से दोनों बाहु

ओम् ऊर्वोर्मऽओजोऽस्तु ॥ इस मन्त्र से दोनों जंघा और

ओम् अरिष्टानि मेङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु॥

इस मन्त्र से दाहिने हाथ से जलस्पर्श करके मार्जन करना प्रथम यज्ञकुण्ड में शुद्ध देशोत्पन्न आम, बड, पीपल, गूलर व पलाश आदि की घुन अथवा कीडे रहित समिधाचयन वेदी में करें पुनः ॥

ओं भूर्भुवः स्वः ॥

इस मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मण क्षत्रिय वा वैश्य के घर से अग्नि ला अथवा घृत का दीपक जला उस से कपूर में लगा किसी एक पात्र में धर उस में छोटी-छोटी लकडी लगा के यजमान वा पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों से उठा यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड कर अगले मन्त्र से अग्न्याधान करें वह मन्त्र यह है ॥

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा ।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे ॥१॥

यजु० अ० ३। म० ५ ॥

इस मन्त्र से वेदी के बीच में अग्नि को धर उस पर छोटे-छोटे काष्ठ और थोडा कपूर धर अगला मन्त्र पढ के व्यजन से अग्नि को प्रदीप्त करें॥

ओम् उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत॥२॥ यजु० अ० १५। म० ५४ ॥

जब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे तब चन्दन की अथवा ऊपर लिखित पलाशादि की तीन लकडी आठ-आठ अंगुल की घृत में डुबा उन में से एक-एक निकाल नीचे लिखे एक-एक मन्त्र से एक-एक समिधा को अग्नि में चढावें वे मन्त्र ये हैं ॥

ओम् अयं त इध्मऽआत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय, स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे - इदन्न मम॥ १॥ इस मन्त्र से एक

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन् हव्या जुहोतन, स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदन्न मम ॥ २॥

इस से और

सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन। अग्नये जातवेदसे, स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे - इदन्न मम ॥ ३॥

इस मन्त्र से अर्थात् इन दोनों मन्त्रों से दूसरी

तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि ।बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे - इदन्न मम ॥ ४॥

यजु० अ० ३। म० १-३॥

इस मन्त्र से तीसरी समिधा की आहुति देवें ।

इन मन्त्रों से समिधादान करके होम का शाकल्य जो कि यथावत् विधि से बनाया हो, सुवर्ण, चांदी, कांसा, आदि धातु के पात्र अथवा काष्ठ पात्र में वेदी के पास सुरक्षित धरें पश्चात् उपरि लिखित घृतादि जो कि उष्ण कर छान पूर्वोक्त सुगन्ध्यादि पदार्थ मिला कर पात्रों में रक्खा हो, उस में से कम से कम ६ मासा भर घृत वा अन्य

मोहनभोगादि जो कुछ सामग्री हो अधिक से अधिक छटांक भर की आहुति देवे आहुति का प्रमाण है उस घृत में से चमसा कि जिस में छः मासा ही घृत आवे ऐसा बनाया हो भर के नीचे लिखे मन्त्र से पांच आहुति देनी ॥

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥ इदमग्नये जातवेदसे - इदन्न मम॥१॥

तत्पश्चात् वेदी के पूर्व दिशा आदि और अञ्जलि में जल ले के चारों ओर छिडकावें उसके ये मन्त्र हैं :-

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व ॥ इस मन्त्र से पूर्व

ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥ इससे पश्चिम

ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥ इससे उत्तर और

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥

यजु० अ० ३० । म० १॥

इस मन्त्र से वेदी के चारों ओर जल छिडकावे इस के पश्चात् सामान्य होमाहुति गर्भाधानादि प्रधान संस्कारों में अवश्य करें इस में मुख्य होम के आदि और अन्त में जो आहुति दी जाती है उन में से यज्ञकुण्ड के उत्तर भाग में जो एक आहुति और यज्ञकुण्ड के दक्षिण भाग में दूसरी आहुति देनी होती है, उस का नाम " अघारावाज्याहुति " कहते हैं और जो कुण्ड के मध्य में आहुतियाँ दी जाती हैं उन का नाम " आज्यभागाहुति " कहते हैं सो घृतपात्र में से स्रुवा को भर अंगूठा मध्यमा अनामिका से स्रुवा को पकड के

ओम् अग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदन्न मम ॥

इस मन्त्र से वेदी के उत्तरभाग अग्नि में

ओं सोमाय स्वाहा ॥ इदं सोमाय - इदन्न मम ॥

इस मन्त्र से वेदी के दक्षिणभाग में प्रज्वलित समिधा पर आहुति देनी

तत्पश्चात् -

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये - इदन्न मम ॥
ओम् इन्द्राय स्वाहा ॥ इदमिन्द्राय - इदन्न मम ॥

इन दोनों मन्त्रों से वेदी के मध्य में दो आहुति देनी उस के पश्चात् चार आहुति अर्थात् आघारावाज्यभागाहुति देके जब प्रधान होम अर्थात् जिस-जिस कर्म में जितना-जितना होम करना हो, करके पश्चात् पूर्णाहुति पूर्वोक्त चार (आघारा-वाज्यभागा०) देवें पुनः शुद्ध किये हुए उसी घृतपात्र में से स्रुवा को भर के प्रज्वलित समिधाओं पर व्याहृति की चार आहुति देवें ॥

ओं भूरग्नये स्वाहा ॥ इदमग्नये - इदन्न मम ॥
ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे - इदन्न मम ॥
ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय, इदन्न मम॥
ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः, इदन्न मम ॥

ये चार घी की आहुति दे कर ' स्विष्टकृत होमाहुति ' एक ही है यह घृत की अथवा भात की देनी चाहिये उस का मन्त्र

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम् । अग्निष्ट-त्स्विष्टकृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे । अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा ॥ इदमग्नये स्विष्टकृते, इदं न मम ।

इस से एक आहुति करके प्राजापत्याहुति करें नीचे लिखे मन्त्र को मन में बोलके देनी चाहिये

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये, इदन्न मम॥

इस से मौन करके एक आहुति देकर चार आज्याहुति घृत की देवें परन्तु जो नीचे लिखी आहुति चौल समावर्तन और विवाह में मुख्य हैं वे चार मन्त्र ये हैं ॥

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनां स्वाहां ॥ इदमग्नये पवमानाय - इदन्न मम ॥१॥

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः। तमींमहे महागयं स्वाहां ॥ इदमग्नये पवमानाय - इदन्न मम ॥२॥

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषं स्वाहां ॥ इदमग्नये पवमानाय - इदन्न मम ॥ ३ ॥

ऋ० म० ६ । सू० ६६ । मं० १९-२१ ॥

ओं भूर्भुवः स्वः। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयं स्यांम पतंयो रयीणां स्वाहा। इदं प्रजापतये - इदन्न मम ॥४॥

॥ ऋ० म० १०/ सू० १२१/ मं० १० ॥

इन से घृत की ४ चार आहुति करके " अष्टाज्याहुति " ये निम्नलिखित मन्त्रों से सर्वत्र मङ्गलकार्यों में ८ आठ आहुति देवें परन्तु किस-किस संस्कार में कहाँ-कहाँ देनी चाहिये यह विशेष बात उस-उस संस्कार में लिखेंगे वे आठ आहुतिमन्त्र ये हैं ॥

ओं त्वन्नोंऽअग्ने वरुंणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽअवंयासिसीष्ठाः। यजिंष्ठो वह्नितमः शोशुंचानो विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहां॥ इदमग्निवरुणाभ्यां - इदन्न मम ॥१॥

ओं स त्वन्नों अग्नेऽवमो भंवोती नेदिंष्ठोऽअस्या उषसो व्युंष्टौ। अवंयक्ष्व नो वरुंणं ररांणो वीहि मृंडीकं सुहवों न एधि स्वाहां ॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां - इदन्न मम ॥२॥

॥ ऋ० म० ४। सू० १। मं० ४,५ ॥

ओम् इमं में वरुण श्रुधी हवंमद्या चं मृडय।
त्वामंवस्युराचंके स्वाहां॥ इदं वरुणाय - इदन्न मम ॥३॥

॥ ऋ० म० १। सू० २५। मं० १६ ॥

ओं तत्त्वां यामि ब्रह्मंणा वन्दंमानस्तदा शांस्ते यजंमानो हविर्भिः। अहेंडमानो वरुणेह बोध्युरुंशंस मा न आयुः प्रमोंषीः स्वाहां ॥ इदं वरुणाय - इदन्न मम ॥ ४ ॥

॥ ऋ० म० १। सू० २४। मं० ११ ॥

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः॥ तेभिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्क्काः स्वाहा॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्क्केभ्यः - इदन्न मम ॥ ५॥ ऋ० म० १। सू० २४। मं० १५ ॥

ओम् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयासि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा ॥ इदमग्नये अयसे - इदन्न मम ॥ ६ ॥

ओम् उदुंत्तमं वंरुण पाशंमस्मदवांधमं विमंध्यमं श्रंथाय। अथां वयमांदित्य व्रते तवानांगसोऽअदिंतये स्याम स्वाहां ॥ इदं वरुणायाऽऽदित्यायाऽदितये च - इदन्न मम ॥ ७॥

ओं भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ मा यज्ञꣳहिꣳसिष्टं। मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा ॥ इदं जातवेदोभ्यां - इदन्न मम ॥ ८ ॥ यजु० अ० ५ / म० ३ ॥

नीचे लिखे हुए मन्त्रों से प्रातःकाल अग्निहोत्र करे -

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥ १ ॥

ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥ ३ ॥

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥४॥

अब नीचे लिखे हुए मन्त्र सायंकाल में अग्निहोत्र के जानो ।

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ १ ॥

ओम् अग्निवर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ २ ॥

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥ ३ ॥

इस मन्त्र को मन से उच्चारण करके तीसरी आहुति देनी ।

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरात्र्येन्द्रवत्या जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ॥ ४ ॥

अब निम्नलिखित मन्त्रों से प्रातः सायं आहुति देनी चाहिए ॥

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा ॥

इदमग्नये प्राणाय, इदन्न मम ॥ १ ॥

ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा ॥

इदं वायवेऽपानाय, इदन्न मम ॥ २ ॥

ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा ॥

इदमादित्याय, व्यानाय, इदन्न मम ॥ ३ ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा॥
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः, प्राणापानव्यानेभ्यः, इदन्न मम॥ ४॥

ओम् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥ ५॥

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।

तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ ६ ॥

यजु० अ० ३२। म० १४॥

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।

यद्भद्रं तन्न आसुव स्वाहा ॥ ७ ॥ यजु० अ० ३०। म० ३॥

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा ॥ ८ ॥ यजु० अ० ४०। म० १६॥

इन ८ आठ मन्त्रों से एक-एक मन्त्र करके एक-एक आहुति, ऐसे ८ आठ देवे

सब संस्कारों में मधुर स्वर से मन्त्रोच्चारण यजमान ही करे, न शीघ्र न विलम्ब से उच्चारण करे किन्तु मध्य भाग जैसा कि जिस वेद का उच्चारण है करे यदि यजमान न पढा हो तो इतने मन्त्र तो अवश्य पढ लेवे, यदि कोई कार्यकर्त्ता जड, मंदमति, काला अक्षर भैंस बराबर जानता हो तो वह शूद्र है अर्थात् शूद्र मन्त्रोच्चारण में असमर्थ हो तो पुरोहित और ऋत्विज् मन्त्रोच्चारण करें और कर्म उसी मूढ यजमान

के हाथ से करावे पुनः निम्नलिखित मन्त्र से पूर्णाहुति करे स्रुवा को घृत से भर के

ओं सर्वं वै पूर्णꣳ स्वाहा ।

इस मन्त्र से एक आहुति देवे ऐसे दूसरी और तीसरी आहुति देके जिस को दक्षिणा देनी हो देवे वा जिस को जिमाना हो जिमा, दक्षिणा देके सब को विदा कर स्त्री पुरुष हुतशेष घृत भात वा मोहनभोग को प्रथम जीम के पश्चात् रुचिपूर्वक उत्तमान्न का भोजन करें॥

मंगलकार्य

अर्थात् गर्भाधानादि संन्यास संस्कार पर्यन्त पूर्वोक्त और निम्नलिखित सामवेदोक्त वामदेव्यगान अवश्य करें वे मन्त्र ये हैं॥

ओं भूर्भुवः स्वः । कया नश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठया वृता ॥ १ ॥

ओं भूर्भुवः स्वः । कस्त्वा सत्यो मदानां मꣳहिष्ठो मत्सदन्धसः । दृढा चिदारुजे वसु ॥ २ ॥

ओं भूर्भुवः स्वः । अभीषु णः सखीनामविता जरितॄणाम् । शतम्भवास्यूतये ॥ ३ ॥

॥ महावामदेव्यम् ॥

काऽ५या । नश्चा३ इत्रा३ आभुवात् । ऊ । ती सदावृधः सखा । औ३होहाइ । कया २३ शचाइ । ष्ठयोहो ३ हुम्मा२ । वा२र्तो३ऽ५हाइ ॥ १ ॥

काऽ५स्त्वा । सत्यो३मा३दानाम् । मा । हिष्ठो-मात्सादन्धः । सा । औ३होहाइ । दृढा २३ चिदा । रुजौहो३ । हुम्मा २ । वाऽ३सो३ऽ५ हायि ॥ २ ॥

आ ऽ५ भी । षुणा३ः सा३खीनाम् । आ । विता जरायि<u>त</u> । णाम् । औ २३ हो हायि । शता २३ म्भवा। सियौहो३ । हुम्मा२ । ताऽ२ यो ३ऽ५ हायि ॥ ३ ॥

॥ साम० उत्तरार्च्चिके अध्याये १ । खं ३ । मं० १/२/३॥

यह वामदेव्यगान होने के पश्चात् गृहस्थ स्त्री पुरुष कार्यकर्त्ता सद्धर्मी लोकप्रिय परोपकारी सज्जन विद्वान् वा त्यागी पक्षपातरहित संन्यासी जो सदा विद्या की वृद्धि और सब के कल्याणार्थ वर्त्तने वाले हों उन को नमस्कार आसन, अन्न, जल, वस्त्र, पात्र, धन, आदि के दान से उत्तम प्रकार से यथा सामर्थ्य सत्कार करें पश्चात् जो कोई देखने ही के लिये आये हों उन को भी सत्कारपूर्वक विदा कर दें अथवा जो संस्कार क्रिया को देखना चाहें वे पृथक्-पृथक् मौन करके बैठे रहें कोई बातचीत हल्ला गुल्ला न करने पावें, सब लोग ध्यानावस्थित प्रसन्नवदन रहें विशेष कर्मकर्त्ता और कर्म कराने वाले शान्ति धीरज और विचारपूर्वक, क्रम से कर्म करें और करावें यह सामान्यविधि अर्थात् सब संस्कारों में कर्त्तव्य है।

रात्रिकालीन मंत्र

ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥१॥

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥२॥

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्नऽऋते किं चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ३॥

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ४॥

यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिँश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ ५॥

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिनऽइव।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥६॥

यजु० अ० ३४ । मं० १-६ ॥

प्रार्थना

सर्वेभवन्तु सुखिनाः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वेभद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्।

हे ईश सब सुखी हों, कोई न हो दुःखारी ।
सब हो निरोग भगवन्, धनधान्य के भण्डारी॥
सब भद्र भाव देखे, सन्मार्ग के पथिक हो।
दुखिया न कोई होवे, सृष्टि में प्राणधारी॥

सब का भला करो भगवान् सब पर कृपा करो भगवान्।
सब पर दया करो भगवान् सब का सब विध हो कल्याण॥

द्विज् वेद पढें सुविचार बढें बल पाए चढें नित ऊपर को।
अविरुद्ध रहें रिजु पन्थ गहें परिवार कहें वसुधा भर को।
धुव्र धर्म धरे पर दुःख हरें तन त्याग तरें भवसागर को।
दिन फेर पिता वर दे सविता हम आर्य करें जगती भर को॥

- गायत्रीमन्त्र का कविता में अर्थ -

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू।
तुझसे ही पाते प्राण हम, दुःखियों के कष्ट हरता है तू॥ १॥
तेरा महान् तेज है, छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु-वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान॥ २॥
तेरा ही धरते ध्यान हम, मांगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला॥ ३॥

प्रार्थना

पूजनीय प्रभु हमारे भाव उज्ञ्वल कीजिये।
छोड देवें छल कपट को मानसिक बल दीजिये॥
वेद की बोले ऋचायें सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे शोक सागर से तरें॥

अश्वमेधादिक रचायें यज्ञ पर उपकार को।
धर्म मर्यादा चलाकर लाभ दें संसार को॥
नित्य श्रद्धा भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें।
रोग-पीडित विश्व के सन्ताप सब हरते रहें॥
भावना मिट जाये मन से पाप अत्याचार की।
कामनायें पूर्ण हों यज्ञ से नर-नारी की॥
लाभकारी हो हवन हर जीवधारी के लिये।
वायुजल सर्वत्र हों शुभ गन्ध को धारण किये॥
स्वार्थ भाव मिटे हमारा प्रेमपथ विस्तार हो।
इदन्न मम का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो॥
प्रेम रस में तृप्त होकर वन्दना हम कर रहे।
नाथ करुणा रूप करुणा आपकी सब पर रहे॥

- सुखी बसे संसार सब -

सुखी बसे संसार सब, दुखिया रहे न कोय।
यह अभिलाषा हम सबकी, भगवन् ! पूरी होय॥
विद्या-बुद्धि तेज बल, सबके भीतर होय।
दूध पूत धन-धान्य से, वञ्चित रहे न कोय॥
आपकी भक्ति प्रेम से, मन होवे भरपूर।
राग-द्वेष से चित्त मेरा, कोसों भागे दूर॥
मिले भरोसा आपका, हमें सदा जगदीश।
आशा तेरे धाम की, बनी रहे मम ईश॥
पाप से हमें बचाइये, करके दया दयाल।
अपना भक्त बनायकर, सबको करो निहाल॥
दिल में दया उदाहरता, मन में प्रेम-अपार।
हृदय में धीरता वीरता, सबको दो करतार॥
नारायण तुम आप हो, पाप विमोचन हार।
दूर करो अपराध सब, कर दो भव से पार॥
हाथ जोड विनती करूँ, सुनिये कृपा निधान।
साधु-संगत सुख दीजिये, दया नम्रता दान॥

भगवन् हमें सद्बुद्धि दो ॥

हम तेरे उपासक माँग रहे, भगवन् हमें सद्बुद्धि दो ।
हे सविता मेधा प्रज्ञा दो , भगवन् हमें सद्बुद्धि दो ॥

बुद्धिबल से ही मानव का, उत्कर्ष यथावत् सम्भव है।
गायत्री मन्त्र में माँगा है, भगवन् हमें सद्बुद्धि दो ॥

हे देव उपास्य उपासक के, सब पाप दुरित दुःख दूर करो।
हम भद्र कहें और भद्र सुनें, भगवन् हमें सद्बुद्धि दो ॥

सद्ज्ञान विवेक समृद्धि दो, तन मन धन की शुद्धि दो।
सब ऋद्धि वृद्धि सिद्धि दो, भगवन् हमें सद्बुद्धि दो ॥

जीवन क्या है ? मृत्यु क्या है ? क्यों आए मानव योनि में?
इन गूढ रहस्यों को समझें, भगवन् हमें सद्बुद्धि दो ॥

इस पावन वेला में मिल कर, हम यहीं याचना करते हैं।
भव सागर पार उतरने को, भगवन् हमें सद्बुद्धि दो ॥

ईश प्रार्थना

हे दयामय हम सबों को शुद्ध मेधा दीजिये।
दोष दुर्गुण दूरकर कल्याण हे प्रभो कीजिये॥

विश्व पर ऐसा अनुग्रह आपका परमेश हो।
धर्मरत हो सकल जनमन में न पाप का लेश हो॥

कीजिये सबके हृदय को शुद्ध अपने ज्ञान से।
मान भक्तों में बढाओ अपनी भक्ति दान से ॥

सीख ले विद्या कला बल, बुद्धि का सञ्चार हो।
हो जगत् में सदा सुमति, शुभ भक्ति का विस्तार हो॥

विश्व में नित्य सत्य सनातन, वेद धर्म प्रचार हो।
हो परस्पर प्रीति सबमें, देश का उद्धार हो॥

पञ्चयज्ञों से सुपावन, शान्तिमय सब देश हो।
सर्व सुख सम्पन्न होवे, नष्ट सारे क्लेश हो॥
त्याग दे हम क्रोध मत्सर, लोभ लालच द्रोह को।
काम विषयों से विरत हो छोड दे मद मोह को॥
सत्यसङ्गति में रहें हम वेदमार्ग पर चलें।
विश्वसेवा में सफल स्वाधीनता फूले फले॥
सत्य शम दम ब्रह्मचर्य को धारण करे।
सत्य अहिंसाव्रत सदा अन्याय का वारण करें।
यम नियम पालन करें अति प्रेम पूर्वक सर्वदा।
प्राप्ति परमानन्द की हो अभय हम विचरे सदा॥
सर्वरक्षक पथप्रर्दशक न्यायकारी मानकर।
आपको ही नित्य भजे हम सर्वव्यापक जानकर॥
हे प्रभो रखिये शरण में, योग का साधन करें।
मुक्तजीवन प्राप्त कर हम ओ३म् यश कीर्तन करें॥

- यज्ञमहिमा -

होता है सारे विश्व का, कल्याण यज्ञ से।
जल्दी प्रसन्न होते हैं, भगवान् यज्ञ से॥
ऋषियों ने ऊँचा माना, है स्थान यज्ञ का।
करते हैं दुनिया वाले, सब सम्मान यज्ञ का॥
दर्जा है तीन लोक में, महान् यज्ञ का।
जाता है देवलोक को, इंसान यज्ञ से॥ होता है०.....
जो कुछ भी डालो यज्ञ में, खाते हैं अग्नि देव।
सबको प्रसाद यज्ञ का, पहुँचाते अग्निदेव॥
बदले में एक के अनेक, दे जाते अग्निदेव।
बादल बनाकर भूमि पर, बरसाते अग्निदेव॥
पैदा अनाज होता है, भगवान् यज्ञ से।
होता है सार्थक वेद का, विज्ञान यज्ञ से॥ होता है०.
शक्ति और तेज यश भरा, इस शुद्ध नाम में।

साक्षी सही है विश्व के, हर नेक काम में॥
पूजा है इसको श्रीकृष्ण, पुरुषोत्तम राम ने॥
होता है कन्याग्रहण भी, इसी के सामने॥
मिलता है राज्य, कीर्त्ति, सन्तान यज्ञ से॥ होता है०.....
सुख शान्तिदायक मानते, हैं सब मुनि इसे।
वशिष्ठ, विश्वामित्र और नारदमुनि इसे॥
इसका पुजारी कोई भी, पराजित नहीं होता॥
भय यज्ञकर्त्ता को कभी, किंचित् नहीं होता॥
होती हैं सारी मुश्किलें, आसान यज्ञ से॥ होता है०.
चाहे अमीर है कोई, चाहे गरीब है।
जो नित्य यज्ञ करता है, वह खुशनसीब है॥
हम सब में रहे, सर्वदा यज्ञिय भावना।
' जख्मी ' की सच्चे दिल से है, यह श्रेष्ठ कामना॥
होती है पूर्ण कामना, महान् यज्ञ से॥ होता है०......

- पितु मातु सहायक स्वामी सखा -

पितु मातु सहायक स्वामी सखा, तुम ही एक नाथ हमारे हो।
जिसके कुछ और आधार नहीं, तिनके तुम ही रखवारे हो॥१॥
सब भाँति सदा सुखदायक हो, दुःख दुर्गुण नाशनहारे हो।
प्रतिपाल करो सिगरे जग को, अतिशय करुणा उर धारे हो॥ २॥
भूले हैं हम ही तुम को, तुम तो सुधि नाहि बिसारे हो।
उपकारन को कुछ अन्त नहीं, छिन ही छिन जो विस्तारे हो॥ ३॥
महाराज महा महिमा तुम्हरी, समझे बिरले बुधवारे हो।
शुभ शान्ति-निकेतन प्रेमनिधे, मन-मन्दिर के उजियारे हो॥ ४॥
इस जीवन के तुम जीवन हो, इन प्राणन के तुम प्यारे हो।
तुम सो प्रभु पाय कृपालु निधे! केहि के अब और सहारे हो॥ ५॥

- प्रभु प्यारे से जिसका सम्बन्ध है -

प्रभु प्यारे से जिसका सम्बन्ध है।
उसे हरदम आनन्द ही आनन्द है ।

झूठी ममता से करके किनारा।
लेके सच्चे प्रभू का सहारा।
जो उसकी रजा में, रजामन्द है॥ २॥ उसे०...

जिसकी कथनी में कोयल सी चहक है।
जिसकी करनी में फूलों सी महक है।
प्रेम नरमी ही जिसकी सुगन्ध है॥ २॥ उसे०....

निन्दा चुगली न जिसको सुहावे।
बुरी संगत की रंगत न आवे।
सत्संगत ही जिसको पसन्द है॥ ३॥ उसे०....

दीन दुःखियों के दुःख जो मिटावे।
बनके सेवक भला सबका चाहे।
नहीं जिसमें घमण्ड और पाखण्ड है॥ ४॥ उसे०....

राष्ट्रिय-भजन

ब्रह्मन् ! स्वराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्मतेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरिदल विनाशकारी॥ १॥

होवें दुधारु गौवें, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही ॥ २॥

बलवन् सभ्य योद्धा, यजमानपुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षे, पर्जन्य ताप धोवें॥ ३॥

फल-फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हो योगक्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी॥ ४॥

- आज मिल सब गीत गाओ -

आज मिल सब गीत गाओ, उस प्रभु के धन्यवाद।
जिसका यश नित गाते हैं, गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद॥ १॥

मन्दिरों में कन्दरों में, पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ-सौ, बार मुनिवर धन्यवाद॥ २॥

करते हैं जंगल में मंगल, पक्षिगण हर शाख पर।
पाते हैं आनन्द मिल, गाते हैं स्वरभर धन्यवाद॥ ३॥

कूप में तालाब में, सिन्धु की गहरी धार में।
प्रेम-रस में तृप्त हो, करते हैं जलचर धन्यवाद॥ ४॥

शादियों में कीर्त्तनों में, यज्ञ और उत्सव के आदि।
मीठे स्वर से चाहिये, करें नारी-नर सब धन्यवाद॥ ५॥

गान कर ' अमीचन्द ' भजनानन्द ईश्वर की स्तुति।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता, कान धर-धर धन्यवाद॥ ६॥

- सबका दाता है तू० -

सबका दाता है तू, जग-विधाता है तू निर्विकारी।
पार कर भव से नैय्या हमारी॥

सारा है विश्व तुझमें समाया, ऐसी अद्भुत है प्रभू तेरी माया।
तू निराकार है, सबका आधार है, तेजधारी॥ १॥

वेद ने है ' अकायम् ' बताया, ' ओम् ' खंब्रह्म ' है नाम पाया।
सृष्टिकर्ता है तू, उसका धर्ता है तू, अन्तकारी॥ २॥ पार०

वन में उपवन में तुझको हैं ध्याते, देवगण हैं तेरी गति गाते।
अब तो दे आस तू, करके निजपास तू, न्यायकारी॥ ३॥ पार०

केवल जिज्ञासा है एक मेरी, पात्र बन जाऊँ आशा का तेरी।
कर कृपा शीघ्र अब, ' चन्द्र' दर्शन हो तब, मोक्षकारी॥ ४॥

महर्षि दयानन्द सरस्वती

धन्य हैं तुम को ऐ ऋषि, तुम ने हमें बचा दिया।
सो-सो के लुट रहे थे हम, तू ने हमें जगा दिया॥

तुझ में कुछ ऐसी बात थी, कि स्वामी तेरी बात पर।
कितने शहीद हो गये, कितनों ने सर कटा दिया॥ १॥

श्रद्धा से श्रद्धानन्द ने, सीने पे खाई गोलियां।
हंस-हंस के हंसराज ने, तन मन व धन लुटा दिया॥ २॥

अपने लहू से लेखराम, तेरी कहानी लिख गया।
तू ने ही लाला लाजपत, शेरे बबर बना दिया॥ ३॥

तेरे दीवाने जिस घडी, दक्षिण दिशा को चल दिये।
अचरज में लोग रह गए, दुनियाँ का दिल हिला दिया॥ ४॥

अन्धों को आंखें मिल गईं, मुर्दों में जान आ गई।
जादू सा क्या चला दिया, अमृत-सा क्या पिला दिया॥ ५॥

- प्रभु का लो धर ध्यान -

प्रभू का लो धर ध्यान, सदा सुख पाओगे।

सब जग का, कर्त्तार वही है।
मानव का सुख-सार वही है।
लो निश्चय यह जान॥ १॥ सदा सुख पाओगे०

माता, पिता, सखा वह भ्राता।
अखिल विश्व का, ब्रह्म है त्राता।
है श्रुति का व्याख्यान॥ २॥ सदा सुख पाओगे०

ऋषि मुनियों ने, विभु को ध्याया।
जीवन अपना, सफल बनाया।
थे सब ही गतिमान ॥ ३॥ सदा सुख पाओगे०

धर्मयुक्त व्यवहार करो सब।
मुक्ति को पा, शीघ्र तरो भव।
‘ चन्द्र ’ तजो अभिमान॥ ४॥ सदा सुख पाओगे०

- प्रभो ! हम मांग रहे वरदान -

प्रभो ! हम मांग रहे वरदान।
श्रद्धावान् होकर करते हैं, हम सदा तुम्हारा ध्यान॥

जब-जब मुख से वचन निकलते, आपस में हिल मिलकर चलते।
कीर्ति तुम्हारी गा-गाकर हम हटा रहे अभिमान॥ १॥ प्रभो०

सुन्दर सुरभित फूल मनोहर, तुमने पैदा किये यहाँ पर,
इनको देख तुम्हारे बल का, हो आता है ध्यान॥ २॥ प्रभो०

सूर्य चन्द्रमा सदा घूमते, तारे नभ को सदा चूमते,
यह नीला आकाश तुम्हारा ही, तो तना वितान॥ ३॥ प्रभो०

निज शरण में विमल भक्ति दो जन सेवा की नाथ शक्ति दो।
तुम अजान मत बनो बना दो, हमें सुजान समान॥ ४॥ प्रभो०

- दया कर दान भक्ति का हमें परमात्मा देना -

दया कर दान भक्ति का हमें परमात्मा देना।
दया करना हमारी आत्मा में शुद्धता देना॥

हमारे ध्यान में आओ, प्रभो आंखों में बस जाओ।
अंधेरे दिल में आकर के परम ज्योति जगा देना॥ १॥ दया०

बहा दो प्रेम की गंगा, दिलों में प्रेम का सागर।
हमें आपस में मिलजुल कर, प्रभो रहना सिखा देना॥ २॥ दया०

हमारा धर्म हो सेवा, हमारा कर्म हो सेवा।
सदा ईमान हो सेवा, व सेवकचर बना देना॥ ३॥ दया०

वतन के वास्ते जीना, वतन के वास्ते मरना।
वतन पर जाँ फिदाँ करना, प्रभो हमको सिखा देना॥ ४॥ दया०

महर्षि स्तवन

वेदों का डंका आलम में, बजवा दिया देव दयानन्द ने।
हर जगह ओम् का झण्डा, फिर फहरा दिया देव दयानन्द ने।

आन अविद्या की हरसू, फिर फहरा दिया देव दयानन्द ने।
कर नष्ट उन्हें जग में प्रकाश, फैला दिया देव दयानन्द ने॥ १॥

सर पर तुफान बला का था, नजरों से दूर किनारा था।
बनकर मल्लाह किनारे पर पहुँचा दिया देव दयानन्द ने॥ २॥

घुस गये लुटेरे घर में थे, सब माल लूट कर ले जाते।
सद् शुभ्र हाथ सोतों का पकड़, बिठला दिया देव दयानन्द ने॥

मक्कारी दगा फरेबों से, जो माल मुफ्त का खाते थे।
सब पोल खोलकर दिल उनका दहला दिया देव दयानन्द ने॥ ३॥

उड गये होश मतवालों के, मैदान छोडकर भाग गये।
हथियार तर्क का निकाल जब, चमका दिया देव दयानन्द ने॥ ४॥

कब्रों में सर को पटकते थे, कोई गैरों के हरम में भटकते थे।
दे ज्ञान उन्हें मुक्ति का मार्ग, बतला दिया देव दयानन्द ने॥ ५॥

करते थे हमेशा चीख-चीख, तौहीन जो पावन वेदों की।
सर उनका वेदों के आगे, झुकवा दिया देव दयानन्द ने॥ ६॥

सब छोड़ चुके थे धर्म कर्म, गौरव गुमान ऋषि-मुनियों का।
फिर सन्ध्या हवन यज्ञ करना, सिखला दिया देव दयानन्द ने॥ ७॥

विद्यालय गुरुकुल खुलवाये, कायम हर जगह समाज किये।
आदर्श पुरातन शिक्षा का, बतला दिया देव दयानन्द ने॥ ८॥

बलिदान दिया बलिवेदी पर, जीवन "प्रकाश" हँसते-हँसते।
सच्चे रहबर बनकर सबको, चेता दिया देव दयानन्द ने॥ ९॥

- जीवन की घड़ियाँ वृथा न खो० -

जीवन की घड़ियाँ वृथा न खो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो।
चादर न लम्बी तान के सो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो।

ओ३म् ही जग का सार है, जीवन है जीवनाधार है।
प्रीत न उसकी मन से तजो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो॥ १॥

चोला यही है कर्म का, करने को सौदा धर्म का।
इसके बिना मार्ग न को, ओ३म् जपो ओ३म् जपो॥ २॥ जीवन०

मन की गति सम्भालिये, ईश्वर की ओर डालिये।
धोना जो चाहे तो जीवन को धो, ओ३म् जपो॥ ३॥ जीवन०

साथी बना ले ओ३म् को, मन में बिठा ले ओ३म् को।
बन्दे रहा क्यों भाग्य को रो, ओ३म् जपो ओ३म् जपो॥ जीवन०

- अब सौंप दिया इस जीवन का -

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे हाथों में।
है जीत तुम्हारे हाथों में, और है हार तुम्हारे हाथों में॥

मेरा निश्चय है एक यही, एक बार तुम्हें पा जाऊँ मैं।
अर्पण कर दूँ जगती भर का, सब प्यार तुम्हारे हाथों में॥ १॥

या तो मैं जग से दूर रहूँ, या जग में रहूं तो ऐसे रहूं।
इस पार तुम्हारे हाथों में, उस पार तुम्हारे हाथों में॥ २॥

यदि मानुष ही मुझे जन्म मिले, तो तब चरणों का पुजारी बनूँ।
हों मुझ पूजक की पूजा के सब, तार तुम्हारे हाथों में॥ ३॥

जब-जब संसार का बन्दी बन, दरबार तेरे में आऊँ मैं।
हो मेरे कर्मों का निर्णय, सरकार तुम्हारे हाथों में॥ ४ ॥

मुझ में, तुझ में है भेद यही, मैं नर हूँ तुम नारायण हो।
मैं हूँ संसार के हाथों में, और संसार तुम्हारे हाथों में॥ ५॥

- निर्मल मन नित ओ३म् जपा कर -

निर्मल-मन नित ओ३म् जपा कर,
ओ३म् जपा कर ओ३म्।
पल-पल छिन-छिन, घडी-घडी निशदिन,
ओ३म् जपा कर ओ३म्॥

प्रातः समय की सुख-वेला में,
सन्ध्या की पुलकित रजनी में।
रोम-रोम से निकले तेरे,
ओ३म् जपा कर ओ३म्॥ १॥

गहरा सागर टूटी नैय्या,
जीवन तरनी ओ३म् खिवैया।
पार करेंगे ओ३म्।
ओ३म् जपा कर ओ३म्॥२॥

सार तत्त्व की खोज किये जा,
नाम सरस रस रोज पिये जा।
पार करेंगे ओ३म्।
ओ३म् जपा कर ओ३म्॥ ३॥

- आनन्द स्त्रोत बह रहा० -

आनन्द स्त्रोत बह रहा है, पर तू उदास है।
अचरज यह जल में रह के भी, मछली को प्यास है॥ १॥

फूलों में ज्यों सुवास, ईख में मिठास है।
भगवान् का त्यों विश्व के कण-कण में वास है॥ २॥

टुक ज्ञान चक्षु खोल के, तू देख तो सही।
जिसको तू ढूंढता सदा, वह तेरे पास है॥ ३॥

कुछ तो समय निकाल, आत्मशुद्धि के लिये।
नरजन्म का उद्देश्य, न केवल विलास है॥ ४॥

आनन्द मोक्ष का न, पा सकेगा तब तलक।
तू जब तलक " प्रकाश ", इन्द्रियों का दास है॥ ५॥

- अमृत वेला जागररग -

वेला अमृत गया आलसी सो रहा बन अभागा।
साथी सारे जगे तू न जागा॥

झोलियाँ भर रहे भाग्य वाले, लाखों पतितों ने जीवन संभाले।
रंक राजा बने, भक्ति रस में सने, कष्ट भागा।
साथी सारे जगे तू न जागा॥ १॥

कर्म उत्तम थे नर तन जो पाया, आलसी बन के हीरा लुटाया।
उल्टी हो गई मति, करके अपनी क्षति रोने लागा।
साथी सारे जगे तू न जागा॥ २॥

धर्म वेदों का देखा, न भाला, वेला अमृत गया न संभाला।
सौदा घाटे का कर, हाथ माथे पे धर, रोने लागा।
साथी सारे जगे तू न जागा॥ ३॥

बन्दे तूने न कुछ भी विचारा, सिर से ऋषियों का ऋण न उतारा।
हंस का रूप था, गंदला पानी पिया, बनके कागा॥
साथी सारे जगे तू न जागा॥ ४॥

- जय-जय पिता परम० -

जय-जय पिता परम, आनन्द दाता।
जगदादि कारण, मुक्ति प्रदाता॥ १॥

अनन्त और अनादि, विशेषण हैं तेरे।
सृष्टि का स्रष्टा, तु धर्ता संहरता॥ २॥

सुक्ष्म से सुक्ष्म तू, है स्थूल इतना।
कि जिस में यह, ब्रह्मांड सारा समाता॥।३॥

मैं लालित व पालित, हूं पितृ स्नेह का।
यह प्राकृत सम्बन्ध, है तुझ से ताता॥ ४॥

करो शुद्ध निर्मल, मेरी आत्मा को।
करूँ मैं विनय, नित्य सायं व प्रातः॥ ५॥

मिटाओ मेरे भय, आवा-गमन के।
फिरूँ न जन्म पाता, और बिलबिलाता॥ ६॥

बिना तेरे है कौन, दीनन का बन्धु।
कि जिस को मैं, अपनी अवस्था सुनाता॥ ७॥

' अमी ' रस पिलावो, कृपा करके मुझको।
रहूँ सर्वदा तेरी, कीर्ति को गाता॥ ८॥

तू है जन्मदाता

तू है जन्मदाता, तू है पालनहार।
तेरी दया को छोड़कर, मै जाऊ कहां मेरे प्राण॥
तेरी कृपा के खजाने खुले रहते हरदम हैं।
तेरी अमृत की वर्षा होती हरपल है॥
तू मोक्षसुख का दाता, तू अमृत पान कराता।
तू ज्ञानियों का ज्ञानी, तू वेदों का है दानी॥
तू कर्म फल विधाता, रखे सब का लेखा।
तेरे न्याय से स्वामी न कोई बच पाता॥
तू योगियों का योगी, तेरे जैसा न कोई।
तेरी महिमा है अनन्त, मैं कैसे गाऊ स्वामी॥
तू जग का मालिक है, और न कोई दाता।
सब तुझ से माँगते हैं, तू सब को देवे दाता॥
तेरी रचना की पताका, प्रभु तेरा ज्ञान करावे।
वही तेरा दर्शन पाता, खुले ज्ञान चक्षु जिसका॥
तू घट-घट व्यापक स्वामी, हर जगह तुझे ही देखूँ।
अब तक बहुत भटका, अब है तुझको पाना॥
तू अनादि अनन्त अजन्मा, तेरे गुण गावे संसार।
तुझे पाने के लिए, तरपता हर इन्सान॥

- सुबह शाम भजन कर ले० -

सुबह शाम भजन करले, मुक्ति का यत्न करले।
छुट जायेगा जनम-मरण, प्रभु का सुमरन करले।

यह मानव का चोला, हर बार नहीं मिलता।
जो गिर गया डाली से, वह फूल नहीं खिलता।
मौका है ये जीवन का, गुल्जार चमन करले॥ १॥

नर इन कानों से तुन, तू ऋषियों की वाणी।
मन को ठहरा करके, बन जा आत्म-ज्ञानी॥
जिह्वा न चले मुख में, अब ओ३म् जपन करले॥ २॥

इस मैली चादर में, हैं दाग लगे इतने।
पर ज्ञान के साबुन में, है झाग भरे इतने॥
धुल जायेगी सब स्याही, उजला तन मन करले॥ ३॥

वेदों में गूंज रही, मंत्रों की मधुर ध्वनियाँ।
तू ज्ञान की कडियों से, गूंथ नई लडियाँ॥
प्रभु के आगे अब तो, तन मन अर्पण करले॥ ४॥

भज ओम् नाम मेरे भाई.........

भज ओम् नाम मेरे भाई, भज ओम् नाम मेरे भाई।

ओम् नाम की महिमा तो गाता सब संसार है,
जगत नियन्ता, जगत स्रष्टा, जग का यह करतार है।
जिसने ओम् का लिया सहारा, हुआ वह भव से पार॥ भज....

न जाने कब से कितने जन्म व्यर्थ ही गवाए हैं ?
जब जब भूला ओम् नाम को लाखों कष्ट उठाए हैं।
ओम् नाम की रटना तूने, मानुष क्यों भुलाई॥ भज......

सकल विश्व की रचना को किया जीव हित जिसने है,
मुक्त जनों को सुख का अमृत पान कराया जिसने है।
है सब जग से न्यारा वो, करता सबसे प्यार॥ भज.....